International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(4): 99-101

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(4): 99-101
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 01-05-2022
Accepted: 05-06-2022

डॉ. मोहिन्दर नाथ शर्मा
असिस्टैंट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग)
राजकीय मौलाना आज़ाद मैमोरियल कॉलेज, जम्मू, जम्मू–कश्मीर, भारत

Corresponding Author:
डॉ. मोहिन्दर नाथ शर्मा
असिस्टैंट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग)
राजकीय मौलाना आज़ाद मैमोरियल कॉलेज, जम्मू, जम्मू–कश्मीर, भारत

गृह्यादि कृत्यों में पति–पत्नी का स्थान विधान

डॉ. मोहिन्दर नाथ शर्मा

DOI: https://doi.org/10.22271/23947519.2022.v8.i4b.1808

प्रस्तावना

स्त्री और पुरुष के पति–पत्नी के रूप में सहमिलन की संज्ञा गृहस्थ है। पति के बिना पत्नी और पत्नी के बिना पति अपूर्ण है। दोनों गृहस्थ रूपी रथ के चक्र हैं। गृहस्थ–रथ का एक चक्र यदि पति है तो दूसरा चक्र पत्नी है। एक चक्र पर रथ न ठहर सकता है और न गति ही दे सकता है। अतः गृहस्थ जीवन की सफलता दोनों के संयोग से ही संभव है।[1]

पत्नी को पति का आधा भाग कहा गया है।[2] पुरुष जब तक जाया का लाभ नहीं करता, तब तक अपूर्ण ही रहता है। आधे भाग से रहित व्यक्ति के पूर्ण होने की कल्पना नहीं की जा सकती। नारी को जो 'अर्धं भार्या पुरुषस्य' कह कर उसका कीर्तिगान किया गया है, वह यथार्थ है। पुराणों में अर्धनारीश्वर की जो कल्पना की गई है, वह तो पति–पत्नी के सहमिलन का चित्रण है! पति–पत्नी वास्तव में एक दूसरे के पूरक हैं। वेदों में स्त्री–पुरुष के सहमिलन की उपमा जिन तत्त्वों से दी गई है, वह और भी अनुपम है। विवाह संस्कार के अवसर पर वर, वधू को सम्बोधित करते हुए कहता है कि–

"द्यौरहं पृथिवी त्वम्।"

मैं 'द्यु' हूँ और तू 'पृथिवी' है। जैसे द्युलोक और पृथिवी एक दूसरे के प्रति आकर्षित और आबद्ध हैं, वैसे ही हम दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित और आबद्ध रहेंगे।

कवि कुलगुरु कालिदास के अनुसार जैसे संज्ञा और अर्थ का अटूट सम्बन्ध है, वैसे ही पति और पत्नी का अटूट सम्बन्ध है। पति संज्ञा है और पत्नी अर्थ है'–

"वागर्थाविव सम्पृक्तौ"[3]

जैसे संज्ञा और अर्थ को एक दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता, वैसे ही पति–पत्नी को एक–दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता।

वस्तुतः गृहस्थ और गृही शब्द की सार्थकता गृह से और गृह की सार्थकता गृहिणी से है। ईंट, पत्थर एवं सीमेंट आदि से बने घर का नाम 'गृह' नहीं। अपितु गृह का निर्माण तो गृहिणी से होता है–

"न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते"।[4]

गृहस्थरूपी गाड़ी की धुरी को वहन करने के कारण जहाँ स्त्री वह् + धू 'वधू' कहलाती है तथा गृह में, प्रत्येक वस्तु को सुव्यवस्थित और संगृहीत करने के कारण जहाँ 'गृहिणी' कहलाती है, वहीं पति के साथ धर्मकार्यों में सहयोगी बनकर 'पत्नी' कहलाती है।

गृहस्थ में रहते हुए व्यक्ति इहलौकिक पारलौकिक अभ्युदय के लिए नित्य–नैमित्तिक, विभिन्न संस्कारादि दान, यज्ञ, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, विवाह आदि क्रियाओं का सम्पादन करता है। इन सभी क्रियाओं में पत्नी का सहयोग अपेक्षित है, क्योंकि पत्नी गृहस्थ की धुरी है और पत्नी के बिना पति का यज्ञादि कर्म अपूर्ण है। भगवान् राम का अश्वमेध यज्ञ भी तब तक न चल सका, जब तक कि पत्नी के आसन पर सीता जी की स्वर्ण प्रतिमा न रखी गयी। महर्षि पाणिनि ने तो अपने "पत्युर्नो यज्ञसंयोगे" सूत्र में स्त्री की पत्नी संज्ञा यज्ञकार्यों में सहयोग देने पर ही मानी है।[5]

यज्ञादि विविध कृत्यों में पत्नी, पति के किस अंग अथवा भाग में स्थित हो, या आसन ग्रहण करे, इस विषय में हमारे धर्मग्रन्थों, स्मृतिग्रन्थों एवं गृह्यसूत्रों आदि में समुचित निर्देश मिलते हैं।

याघ्रपादस्मृति के अनुसार कन्यादान, विवाह और भवनादि के शिलान्यास आदि यज्ञ में तथा सभी धर्मकार्यों में पत्नी का स्थान सदा पति के दक्षिण में माना गया है–

कन्यादाने विवाहे च प्रतिष्ठायज्ञकर्मणि।
सर्वेषु धर्मकार्येषु पत्नी दक्षिणतः स्मृता।।[6]

लघ्वाश्वलायनस्मृति का कथन है कि श्राद्ध, यज्ञ और विवाह में पत्नी का स्थान सदा वर के दक्षिण भाग में होना चाहिए–

श्राद्धे यज्ञे विवाहे च पत्नी दक्षिणतः सदा।।[7]

यहाँ 'सदा' शब्द से यही प्रकट होता है कि पत्नी का स्थान यज्ञ में सदा दक्षिण ही है– वाम स्थान नहीं है। ध्यातव्य है कि श्राद्ध से तात्पर्य यहाँ मृतक के श्राद्ध से नहीं, अपितु नान्दीश्राद्ध से है। यह श्राद्ध विवाह–संस्कार से पूर्व होता है। इसमें ब्राह्मणों को गोदानादि किया जाता है। इस विषय में व्याघ्रपादस्मृति का स्पष्ट निर्देश है कि हवन, देवतार्चन, नान्दीश्राद्ध तथा मधुपर्क ग्रहण के समय पत्नी–पति के दक्षिण भाग में रहे, जबकि सेवाकार्य, रतिकाल, पितृजनों के पादप्रक्षालन के समय, रथारोहण के समय, गर्भधारण के समय तथा श्राद्ध (मृतक सम्बधियों की दिवंगत आत्माओं के सम्मान में 'अनुष्ठेय' संस्कार) कार्य में पत्नी को पति के वाम भाग में स्थित रहना चाहिएः–

दक्षिणे वसति पत्नी हवने देवतार्चने।
शुश्रूषारतिकाले च वामभागे प्रशस्यते।।
त्रिषु स्थानेषु सा पत्नी वामभागे प्रशस्यते।
पादशौचे पितृणां च रथारोहे ऋतौ तथा।
श्राद्धे पत्नी च वामांगे पादप्रक्षालने तथा।
नान्दी श्राद्धे च होमे च मधुपर्के च दक्षिणे।।[8]

कुछ विद्वानों का मानना है कि जब स्त्री को दक्षिण में बैठाने का ही विधान है तो शास्त्रों में उसे 'वामाङ्गी' क्यों कहा गया है? स्त्री का 'वामाङ्गी' नाम इसलिए नहीं है कि वह वाम भाग में ही रखी जाए। यह शब्द किसी यज्ञ की परिभाषा का नहीं है। यह शब्द लौकिक साहित्य का है। लौकिक साहित्य में 'वाम' शब्द का अर्थ प्रिय, सुन्दर और मनोहर भी होता है। वस्तुतः 'वाम' शब्द का मूल अर्थ सुन्दर ही था।[9] कालक्रम से मूल अर्थ गौण हो गया। 'वाम' का अर्थ यदि उल्टा या बायाँ ही है, तब तो 'वामलोचना' शब्द का अर्थ होगा– टेढ़ी आँख वाली या जिसकी दाहिनी आंख फूट गई है जबकि 'वामलोचना' शब्द का अर्थ है– सुन्दर नेत्रों वाली। इसी प्रकार वामाङ्गी का अर्थ है – सुन्दर अङ्गोंवाली। कुछ विद्वान् यह तर्क देकर पत्नी को वामाङ्ग में बैठाते हैं कि शरीर में हृदय बायीं ओर होता है। अतः स्त्री को वामाङ्ग में बैठाकर वर यह सूचित करता है कि मैं 'गृहस्थ' में पत्नी को वही स्थान दूंगा, जो शरीर में हृदय का है। इस प्रकार की मनगढंत व्याख्याएँ सुनने और पढ़ने में बड़ी रूचिकर लगती हैं, परन्तु इनका शास्त्र से कोई लेना–देना नहीं है।

गृह्यसूत्रों में भी विवाहादि कृत्यों को करते समय वधू को वर के दक्षिण की ओर बैठने के निर्देश दिये गये हैं। पारस्कर गृह्यसूत्र में वेदी के पश्चिम की ओर वर–वधू के बैठने का उल्लेख है। सूत्रकार ने स्वयं स्थान–विशेष का निर्देश नहीं किया है, जबकि हरिहर, गदाधर और विश्वनाथ आदि भाष्यकारों ने वर के दायीं ओर कन्या के बैठने का वर्णन किया है।[10]

विवाह–विधियों की स्पष्टता की दृष्टि से गोभिल गृह्यसूत्र अन्य सूत्रों की अपेक्षा स्पष्ट है। इसमें कन्या का स्थान अग्नि (यज्ञवेदी) के पश्चिम में वर की दाहिनी और निर्धारित किया गया है–

पूर्वे कटान्ते दक्षिणतः पाणिग्राहस्योपविशति।[11]

खादिर गृह्यसूत्र में भी कन्या का स्थान वर के दक्षिण की ओर ही वर्णित–है–

पाणिग्राहस्य दक्षिणतः उपवेशयेत्।[12]

आपस्तम्ब गृह्यसूत्र,[13] बौधायन गृह्यसूत्र,[14] एवं हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र[15] में भी यही मत प्रतिपादित है। केवलमात्र काठक गृह्यसूत्र में उक्त की अपेक्षा वर का स्थान कन्या के दाहिनी ओर माना गया है–

"दक्षिणतः पुमान्भवति"[16]

विवाह में अग्नि की प्रदक्षिणा करते समय वर आगे रहे या वधू? व्यवहारिक रूप से कर्मकाण्डी विद्वानों में यह परिपाटी है कि वे तीन प्रदक्षिणाओं में वधू को आगे रखते हैं तथा चौथी प्रदक्षिणा में वर को आगे चलाते हैं, जबकि इस विषय में खादिरगृह्य सूत्र का स्पष्ट निर्देश है कि वर अग्नि की प्रदक्षिणा करता हुआ वधू को पीछे चलाए –

अग्निं प्रदक्षिणीकुर्वन् वधूमनुगमयेत्। (1.3.24)

इसके अतिरिक्त दर्शपौर्णमास आदि यज्ञों में दक्षिणाग्निकुण्ड दक्षिण दिशा में बनाया जाता है, जिसमें पाकक्रियादि पत्नी ही करती है। इससे भी पत्नी की स्थिति दक्षिण में ही प्रकट होती है। मनुस्मृति में पिता को गाहर्पत्य और माता को दक्षिणाग्नि कहा गया है–

पिता वै, गार्हपत्योऽग्निर्माताग्निर्दक्षिणः स्मृतः।
गुरूराहवनीयस्तु साग्नित्रेता गरीयसी।।[17]

गार्हपत्यकुण्ड के दक्षिण भाग में ही दक्षिणाग्निकुण्ड होता है, अतः पुरुष के दक्षिण भाग में ही यज्ञादि में स्त्री का स्थान ऋषि–मुनि, सूत्र एवं कल्पकारों को प्राचीन काल से मान्य है। हमें भी उसी को मान्यता देनी चाहिए।

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि विवाह, यज्ञादि में पत्नी का स्थान सामान्य रूप से पति के दक्षिण मे ही रहता है, जब तक किसी कर्मविशेष में उसके स्थान विशेष का विधान न किया गया हो।

पत्नी की वाम–भाग में स्थिति कब होनी चाहिए, इस विषय में संस्कारगणपति में भी कहा गया है कि सिंदूरदान, द्विरागमन, शयन के समय, आर्शीवाद ग्रहण करते समय, अभिषेक, विप्रपाद प्रक्षालन के समय तथा भोजन करते समय पत्नी का स्थान पति के उत्तर अर्थात बायीं ओर होना चाहिए–

वामे सिन्दूर दाने च वामे चैव द्विरागमने।
वामे शयनैकस्यायां–भवेज्जाया प्रियार्थिनी।।
आर्शीवादे अभिषेके च पादप्रक्षालेन तथा।
शयने भोजने चैव पत्नी तूत्तरतो भवेत्।।[18]

संस्कार रत्नमाला में भी यही कहा गया है कि सभी हवन यज्ञादि धर्मकार्यों में पत्नी को पति के दायीं ओर रहना चाहिए तथा अभिषेक एवं विप्रपाद प्रक्षालन में बायीं ओर स्थित रहना चाहिए–

सर्वेषु धर्मकार्येषु पत्नी दक्षिणतो भवेत्।
अभिषेके विप्रपादप्रक्षालने वामतः सदा।।

एक अन्य मतानुसार युद्ध की स्थिति में पत्नी को पति के पीछे रहना चाहिए तथा मार्ग में चलते समय पति को स्वयं पीछे तथा पत्नी को आगे रखना चाहिए, ऐसा सम्भवतः पत्नी की सुरक्षा की दृष्टि से कहा गया है–

युद्धेषु पृष्ठतः कुर्यात्, मार्गे अग्रयो निःसरेत्।
ऋतुकाले तु वामांगी, पुण्यकाले तु दक्षिणे।।
(ज्योतिषसर्वसंग्रह)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जो कर्म स्त्रीप्रधान होते हैं, उसमें स्त्री वाम भाग में स्थित होती है, अर्थात् जो कर्म इहलौकिक फलदायक हैं, उसमें पत्नी वाम भाग में रहती है– जैसे– मांग में सिंदूर भरना, सेवा, शयन इत्यादि लौकिक कार्य पुण्य के साधन नहीं हैं, परन्तु यज्ञ, जातकर्म, कन्यादान, विवाह, इत्यादि पुण्यदायक कार्य पुरुषप्रधान माने गये हैं। इन कार्यों में पत्नी दक्षिण में अवस्थित रहती है।

सन्दर्भ

1. एकचक्रो रथो यद्वदेकपक्षो यथा खगः। अभार्यो नरस्तद्वदयोग्यः सर्वकर्मसु।। (भविष्यपुराण)
2. अर्धो वा एष आत्मनो यज्जाया (शतपथ, 5/2/1/10)
3. रघुवंश, 1/1
4. महाभारत, 12/145/6
5. अष्टाध्यायी, 4/1/33
6. व्याघ्रापादस्मृति, 84
7. लघ्वाश्वलायन स्मृति, 6/11
8. व्याघ्रपादस्मृति, 84–87
9. संस्कृत हिन्दी कोष, आप्टे पृ. 917, रचना प्रकाशन, जयपुर
10. पारस्कर गृह्यसूत्र, डॉ. वेदपाल सम्पादित पृ. 35–36
11. गोभिल गृह्यसूत्र 2/1/22
12. खादिर गृह्यसूत्र 1/3/7
13. आपस्तम्बा गृह्यसूत्र 2/4/9
14. बौधायन गृह्यसूत्र 1/3/20
15. हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र 1/3/2
16. काठक गृह्यसूत्र 25/10
17. मनुस्मृति, 2/239
18. संस्कार गणपति म.म.156